AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में नातेदारी की रीतियाँ

ORIGINAL ARTICLE

Author
डॉ. अहिल्या तिवारी
अध्यापक शिक्षा संस्थान
पं रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय
रायपुर, छत्तीसगढ़, भारत

शोध सार

परिवार की भांति ही नातेदारी सामाजिक संस्था एवं सामाजिक संगठन का मौलिक एवं प्राचीन आधार है। आदिम समाजों में लोगो को संबंधो में बांधने वाला आधार नातेदारी ही था। यही कारण है कि आदिकाल से परिवार सामाजिक संगठन का आधार रहा है। नातेदारी अधिकारों तथा दायित्वों की वह व्यवस्था है जो न केवल परिवार के सदस्यों के संबंधों को परिभाषित करती है अपितु कई पारिवारिक इकाइयों के संबंधों को भी प्रकट करती है। नातेदारी व्यवस्था व्यक्तियों या परिवारों को जोड़ने वाली एक कड़ी है। नातेदारी को बंधुत्व, स्वजन, संगोत्र आदि कई नामों से जाना जाता है। नातेदारी एवं विवाह जीवन के आधारभूत तत्व है। यौनइच्छा ने विवाह को एवं विवाह ने परिवार एवं नातेदारी को जन्म दिया है, इस रूप में देखे तो नातेदारी प्रजनन पर आधारित होती है।

मुख्य शब्द

परिवार, समाज, रीति–रिवाज, संबंध, नातेदारी.

भूमिका

नातेदारी वह व्यवस्था है जिसमें व्यक्ति अनेको संबंधो से घिरा हुआ होता है जो उनके मृत्यु तक किसी न किसी रिश्ते के नाम से जाने पहचाने जाते है। कभी – कभी एक ही व्यक्ति से दो या दो से अधिक नाते भी जुड़ जाते है। ये सभी नाते पारिवारिक मान्यता प्राप्त या सामाजिक स्वीकृति प्राप्त होते है। इनमें सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा की भावना पाई जाती है जिससे सामाजिक, नैतिक और आर्थिक हित जुड़े हुये होते है। राष्ट्र, धर्म, प्रदेश सभी समय के साथ बदल सकता है किन्तु नातेदारी एक बार जुड़ जाने के बाद बदला नहीं जा सकता।

नातेदारी का आधार मूलतः जैविक होते हुये भी इसका आधार सामाजिक होता है, अर्थात् नातेदारी में सामाजिक मान्यता जैविकीय तत्व पर आरोपित होती है। गोद ली गई संतान जैविकीय नहीं होती लेकिन सामाजिक मान्यता द्वारा इसमें जैविकीय संबंध स्थापित किया जाता है। इसमें सामाजिक स्वीकृति महत्वपूर्ण होती है। सामाजिक मानवशास्त्र के अन्तर्गत नातेदारी शब्द के मूल्य अधिक है इसी की साहयता से समाज के समस्त प्राणियों के बीच स्थापित संबंधों की विवेचना की जाती है। नातेदारी में सार्वाधिक महत्वपूर्ण वे संबंध होते है जो रक्त संबंध के आधार शिला पर कायम होते है। यह भी कह सकते है कि जो रक्त संबंध अथवा समाज द्वारा मान्य किसी निकट संबंध की परस्पर अनुभूति रखते है। उसी के अनुसार आपस में व्यवहार करते है नातेदार कहलाते है और इस पर आधारित समूह में आंतरिक विभेदीकरण एवं संगठन की व्यवस्था नातेदारी व्यवस्था कहलाती है।

नातेदारी रक्त संबंध पर आधारित हो सकती है अथवा विवाह संबंध पर। विवाह संबंधों के अन्तर्गत न केवल विवाहित दम्पत्ति आते है, अपितु पति के परिवार और पत्नि के परिवार के लोग, पति के परिवार से संबंधी एवं पत्नि के परिवार के संबंधी सम्मिलित होते है। संबंधों का यह ताना–बाना बढ़ता जाता है और नातेदारी संबंधों में अनगिनत लोग शामिल होते जाते है, किन्तु यथार्थ में वही लोग नातेदारी में शामिल किये जाते है जिनमें निकटता हो और वे एक दूसरे के नातेदार के रूप में पहचानते हो। व्यवहारिक नातेदार में पति–पत्नि, सास–ससुर, बहु–दमाद, साला, साली, फूफा–फूफी, देवर–भाभी, सरहज, मौसा, साढ़ू, जेठ–जेठानी, देवरानी, मामा–मामी, भाँजा–भाँजी, चाचा–चाची इत्यादि प्रमुख है। इसके अलावा इनके संबंधी भी नातेदारी के अन्तर्गत ही आते है, जैसे साला–साली के ससुराल वाले या मौसा के घर वाले इत्यादि।

राबिन फॉक्सके अनुसार ''नातेदारी की अत्यंत सामान्य परिभाषा यह है कि नातेदारी केवल मात्र स्वजन अर्थात् वास्तविक ख्यात अथवा कल्पित समरक्त्ता वाले व्यक्तियों के मध्य संबंध है।'' एस. सी. दुबे के शब्दों में ''मानव समाज में जन्म अथवा विवाह के आधार पर परिवारों के सदस्य संबंध एवं व्यवहार की दृष्टि से एक दूसरे के बहुत समीप आ जाते है। इस प्रकार की प्रक्रिया के कारण कुछ प्रकार के सामाजिक संबंधों की सृष्टि होती है। इस विशिष्ट सुव्यवस्थित संबंध श्रृंखला को नियोजित करने वाली प्रथा को हम नातेदारी कहते है।'' रेड क्लिफ ब्राउन के अनुसार ''नातेदारी सामाजिक उद्देश्यों के लिए स्वीकृत वंश संबंध है जो कि सामाजिक संबंधों के परम्परात्मक संबंधो का आधार है।''

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि नातेदारी में उन व्यक्तियों को सम्मिलित करते है जिनसे हमारा संबंध वंश के आधार पर या विवाह के आधार पर निर्मित होते है। ऐसे संबंधो को समाज की स्वीकृति आवश्यक है। परिवार, वंश, कुल, गोत्र, आदि ऐसे समुहों के उदाहरण है जिन समूहों से नातेदारी व्यवस्था का जन्म होता है।

श्रीमती इरावती कर्वे ने भारत में पायी जाने वाली नातेदारी व्यवस्था का अध्ययन किया है जिसमें उन्होंने सम्पूर्ण भारत को चार भागो में बांटा है उत्तरीय, पूर्वीय, मध्य और दक्षिणी क्षेत्र। पूर्वी क्षेत्र की नातेदारी में जनजातियों की नातेदारी आती है। मध्य क्षेत्र में उत्तर एवं दक्षिण क्षेत्र की नातेदारी का मिश्रण पाया जाता है। उत्तरीय एवं दक्षिण क्षेत्र ही भारत में नातेदारी के दो भिन्न क्षेत्र है।

सामाजिक व्यवस्था में नातेदारी की भूमिका

नातेदारी का अर्थ एवं परिभाषा को जानने के बाद यह जानना कि नातेदारी की सामाजिक व्यवस्था में क्या भूमिका है एवं महत्व क्या है यह आवश्यक हो जाता है। व्यक्ति एवं समाज के अन्य पहलुओं को भी समझने में नातेदारी को समझना आवश्यक हो जाता है। सरल एवं आदिम समाजों में नातेदारी एक सामाजिक एवं वास्तविक संस्था है। विद्वानों ने माना है कि नातेदारी एक नींव है जिसपर व्यक्ति जीवन भर खड़ा रहता है। यह अनेको परिस्थितियों में मानव व्यवहार को नियंत्रित कर समाज को व्यवस्थित करने की महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सामाजिक व्यवस्था में नातेदारी की भूमिका एवं महत्व को हम निम्न बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट करते है।

1. **सामाजिक दायित्वों का निर्वाहः** नातेदारी हमे हमारे सामाजिक दायित्वों का निर्वाह करना सिखाती है। नातेदारी के अन्तर्गत अनेकों रिश्ते नाते एक व्यक्ति के साथ जुड़ जाते है और हर रिश्ते के प्रति दायित्व अलग–अलग हो सकते है। कही वह मामा है तो कही वह भाँजा भी है, कही वह दामाद है तो कही वह फुफा भी है, यह तो मात्र उदाहरण है। हम नातेदारी के द्वारा अनेको रिश्तो से रिश्तेदार बन जाते है। सभी के प्रति जो सामाजिक दायित्व होते है उसका निर्वहन करना नातेदारी ही बताती है कि किसके साथ कौन – सा दायित्व जुड़ा हुआ है। इस प्रकार से सामाजिक दायित्वों को निभाकर सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में नातेदारी की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।
2. **विवाह एवं परिवार का निर्धारणः** नातेदारी यह तय करती है कि एक व्यक्ति के विवाह का क्षेत्र क्या होगा। समाज द्वारा किस प्रकार का विवाह मान्यता प्रदत्त है तथा किस प्रकार का विवाह समाज में निषिद्ध

है, दूसरे शब्दों में कहें तो अंतर विवाह, बर्हिविवाह या विवाह के विभिन्न स्वरूपों में किस विवाह को समाज द्वारा मान्य माना गया है यह निर्धारण नातेदारी के आधार पर ही होता है। परिवार का विस्तार नातेदारी का ही विस्तार है। परिवार के विभिन्न प्रकार नातेदारी की भूमिका में पाये जाने वाले प्रकारो को निर्धारित करते है। परिवार में रक्त एवं विवाह संबंध पर आधारित सदस्य पाये जाते है। मातृसत्तात्मक एवं पितृसत्तात्मक परिवारों में विवाह एवं परिवार के स्वरूपों में अंतर पाया जाता है, यहाँ नातेदारों द्वारा एक दूसरे के मध्य व्यवस्था का निर्धारण किया जाता है। यहाँ पर नातेदारी की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

3. **वंश, उत्तराधिकार एवं पदाधिकार का निर्धारणः** वंश, उत्तराधिकार एवं पदाधिकार का निर्धारण में नातेदारी की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। वंशावली की लंबाई प्रतिष्ठा का मापदण्ड नातेदारी को ही माना गया है, क्योंकि वंशावली के अंतर्गत आने वाले परिवार, वंश, गोत्र आदि नातेदारी के ही विस्तृत रूप है। एक व्यक्ति की पद एवं सम्पत्ति का हस्तांरण किन लोगों में होगा, कौन लोग उसके दावेदार होंगे यह सभी बातें नातेदारी के आधार पर ही किया जाता है। कौन किसका उत्तराधिकारी होगा तथा उसके बाद किसे उत्तराधिकारी बनाया जायेगा या किस नातेदार को प्राथमिकता दी जायेगी ये सभी नातेदारी व्यवस्था द्वारा निर्धारित किया जाता है। इस प्रकार नातेदारी व्यवस्था वंश एवं उत्तराधिकार की भूमिका का निर्धारण करता है।

4. **मानसिक संतोषः** नातेदारी व्यक्ति को सामाजिक पद एवं प्रतिष्ठा प्रदान कर मानसिक संतोष देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एक नातेदारी विहिन व्यक्ति अपने आप को अकेला महसूस करता है या अपने दुख–सुख में शामिल करने के लिए किसी को भी अपने समक्ष नहीं पाता है किन्तु नातेदारो से घिरा हुआ व्यक्ति हर पग पर अपने साथ किसी न किसी रिश्ते को अपने पास खड़ा पाता है जिससे उसे मानसिक संतोष की अनुभूति होती है। समूह में रहना व्यक्ति की प्रवृत्ति होती है। नातेदारो के बीच अपने आप को पाकर वह मानवीय आनंद, प्रसन्नता तथा संतोष प्राप्त करता है और विपत्तियों से घबराता नहीं है।

5. **सामाजिक व्यवहार का नियमनः** व्यक्ति के आचरण पर नियंत्रण रखने में नातेदारी समूह की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। एक विशेष अवसर पर विशेष नातेदार की भूमिका को एवं उसके व्यवहार को अन्य नातेदार बहुत ही ध्यान से देखते एवं अनुकरण भी करते है तथा व्यवहार की प्रशंसा व आलोचना भी करते है इसलिए व्यक्ति से जिस व्यवहार की अपेक्षा की जाती है व्यक्ति उसी प्रकार का व्यवहार करना अपना धर्म समझता है। साधारणतः व्यक्ति को इस बात की चिंता रहती है कि उसके व्यवहार पर दुनिया या उसके अन्य नातेदार क्या कहेंगे इसी तरह नातेदारी व्यवस्था सामाजिक व्यवहारो को समाज के आदर्शों के अनुरूप बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

6. **सामाजिक सुरक्षा एवं सहायता प्रदान करनाः** नातेदारी व्यवस्था जीवन के विशेष अवसरों पर व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा एवं सहायता प्रदान करती है। समाज में किसी प्रकार की विपत्ति या आपदा आने पर नातेदार ही मदद करने आगे आते है। बुढ़ापा, दुर्घटना, बीमारी या बेकारी के विरूद्ध भी नातेदारी व्यवस्था सुरक्षा प्रदान करती है। यदि किसी बालक के माता–पिता के साथ कुछ हादसा हो जाये तो सबसे पहले नातेदारो से ही अपेक्षा की जाती है कि वे उसका देख – भाल करें। विवाह आदि के समय भी नातेदारों से सहायता की आशा की जाती है। इस प्रकार सामाजिक सुरक्षा एवं सहायता प्रदान करने में नातेदारी की भूमिका रहती है।

7. **सामाजिक, सांस्कतिक निरंतरता को बनाये रखनाः** नातेदारी व्यवस्था से जुड़े व्यक्ति एक – दूसरे से नजदीकी का या लगाव का अनुभव करते है एवं इस बात का ध्यान रखते है कि समाज के आदर्श और सांस्कृतिक मूल्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होते रहे। नातेदारी बंधुत्व की भूमिका का अहम अंग है। सामाजिक, सांस्कृतिक निरंतरता बनाये रखने में बंधुत्व की भूमिका अति महत्वपूर्ण है इसी उद्देश्य को लेकर समाज ने विवाह एवं उत्तराधिकार को नातेदारी की सामाजिक भूमिका में स्थान दिया है। इसी के माध्यम से नातेदारी व्यवस्था सामाजिक, सांस्कृतिक निरंतरता को बनाये रखने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

8. **मानव को सामाजिक प्राणी बनानाः** मानव को सामाजिक प्राणी बनाने में नातेदारी व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जन्म के समय बालक न तो सामाजिक होता है न ही असामाजिक। नातेदारी के अन्य सदस्यो के साथ रहते हुये एवं अनुकरण, सामाजिकरण के द्वारा धीरे–धीरे संबंधों का ज्ञान होने लगता है। नातेदारी की रीतियो, प्रथाओं, मान्यताओं और विश्वासो के अनुरूप वह स्वयं को ढालने लगता है और एक सामाजिक प्राणी बनकर समाज के प्रति अपने दायित्वों को निभाने में समर्थ बन जाता है। यदि बालक नातेदारो से दूर रहे तो सामाजिक प्राणी नहीं बन पायेगा।
9. **श्रम विभाजन को प्रोत्साहनः** नातेदारी व्यवस्था में विभिन्न रिश्तों के बीच कार्य भी विभिन्न होते है। प्रत्येक रिश्ते का निवर्हन क्षेत्र भिन्न–भिन्न होता है और वो अपने निवर्हन क्षेत्र के अंर्तगत ही कार्य करता है। इस प्रकार नातेदारी श्रम विभाजन को भी प्रोत्साहन देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। नातेदारी व्यवस्था समूह के सदस्यों में श्रम विभाजन के साथ–साथ सहयोग एवं उत्तरदायित्व की भावना भी जागृत करती है इसलिए समाज में कार्य सुचारू रूप से क्रियान्वित होते रहते है। नातेदार दूर हो या पास अपने दायित्व को बखूबी निभाते रहते है।

नातेदारी के समाज के प्रति अनंत भूमिकाएं एवं महत्व है। समाज को निरंतर एवं व्यस्थित बाये रखने में नातेदारी व्यवस्था अत्यंत आवश्यक है। नातेदारी सामाजिक व्यवस्था ही नहीं वरन् सामाजिक प्रक्रिया को भी बनाये एवं गतिमान रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

नातेदारी के प्रकार

नातेदारी के मुख्य दो प्रकार हैंः

1. **रक्त संबधी नातेदारीः** रक्त संबंधी नातेदारी समान रक्त के कारण एक–दूसरे से संबंधित होते है अर्थात् नातेदारी रक्त संबंधों पर आधारित होती है। एक परिवार में माता–पिता तथा उनके पुत्र–पुत्रियों में समान रक्त प्रवाहित होता है। माता–पिता का रिश्ता पति–पत्नि का ही नहीं होता वे प्राणी शास्त्रीय दृष्टि से भी संबंधित होते हैं। उनसे उत्पन्न होने वाले बच्चे उनके समान रक्त समूह से जुड़े होते है। भाई–बहन, पुत्र–पुत्री, पौत्र–पौत्री रक्त संबंधी नातेदार माने जाते है।
2. **विवाह संबंधी नातेदारः** पति–पत्नि में विवाह के कारण दोनो पक्षों से अनेक व्यक्ति सामाजिक संबंधों में आबद्ध हो जाते है। ये सभी व्यक्ति एक स्त्री और एक पुरूष के विवाह बंधनों के कारण नातेदार बन जाते हैं जैसे विवाह के पूर्व एक पुरूष जो किसी का पुत्र या भाई था विवाह के बाद वह किसी का दामाद, किसी का बहनोई, किसी का नंदोई तथा किसी का साढ़ू बन जाता है। इसी प्रकार एक स्त्री विवाह के पूर्व एक पुत्री या बहन रहती है वह विवाह के पश्चात् भाभी, बहु, मामी, चाची बन जाती है। ये सभी विवाह संबंधी नातेदारी कहे जाते हैं।
3. **कल्पित नातेदारीः** इस व्यवस्था के अनुसार यदि पुत्र न होने पर कोई व्यक्ति किसी को गोद ले लेता है तो उस गोद लिए गये व्यक्ति के साथ होने वाला संबंध कल्पित नातेदारी कहलाती है। इस प्रकार की नातेदारी संबंध रक्तीय या वैवाहिकी न होकर सामाजिक श्रेणी का होता है।

नातेदारी की श्रेणियाँ

सभी नातेदारी संबंध समान रूप से घनिष्ट अथवा निकट नहीं होती है। हम अपने सभी रिश्तेदारो के साथ समान आत्मीयता एवं घनिष्ठता का अनुभव नहीं करते। वैयक्तिक भावनाओं के अलावा सामाजिक दृष्टि से सभी संबंधी समान स्तर पर नहीं समझे जाते। आत्मीयता, घनिष्ठता एवं निकटता के आधार पर नातेदारी को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता हैः

1. **प्राथमिक नातेदारीः** नातेदारी की इस श्रेणी के अन्तर्गत वे व्यक्ति आते है जो प्रत्यक्ष संबंधों के आधार पर संबंधित होते है अर्थात् प्राथमिक नातेदार वे व्यक्ति होते है जिनसे हमारा प्रत्यक्ष संबंध होता है जिसके संबंध को

प्रकट करने के लिए किसी माध्यम (नातेदारी आदि) की की जरूरत नहीं पड़ती है जैसे पति–पत्नि, पिता–पुत्र, पिता–पुत्री, माता–पुत्र, माता–पुत्री, बहन–बहन, भाई–भाई, भाई–बहन आदि। ये नाते परस्पर एक दूसरे से संबंधित होते है। मरडाक महोदय ने आठ प्राथमिक नातेदार माने है।

2. **द्वितीयक नातेदारीः** इसके अन्तर्गत वे नातेदार आते हैं, जो व्यक्ति की प्राथमिक श्रेणी संबंधों द्वारा संबंधित होते है। इससे व्यक्ति का प्रत्यक्ष संबंध नहीं होता, किन्तु वे प्रथम श्रेणी के संबंधों से संबंधित होते हैं जैसे दादा–दादी, चाचा–चाची, भतीजा–भतीजी,नाना–नानी, देवर–भाभी, मामा–मामी, साले–सालियाँ आदि। मरडाक महोदय ने हर व्यक्ति के 33 द्वितीय संबंधी माने है जिनसे हमारा प्रत्यक्ष संबंध नहीं होता है।
3. **तातीयक नातेदारीः** यह नातेदारी वह नातेदारी है जो हमारे प्राथमिक संबंधियों के द्वितीयक संबंधी और द्वितीयक संबंधियों के प्राथमिक संबंधी होते हैं। नातेदारी की इस श्रेणी में विशिष्ट प्रकार के व्यवहार प्रतिमानों का निर्धारण होता है। इसके अन्तर्गत पितामह, साले की पत्नि एवं उसके पुत्र–पुत्री, मौसा, बुआ का लड़का, फूफा आदि रिश्ते आते हैं। मरडाक महोदय ने तृतीयक नातेदारी में संबंधियों की संख्या 133 बतायी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नातेदारी की तीन श्रेणियाँ है और इन तीनों श्रेणियों में अनगिनत प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तथा कई माने गये रिश्तेदार गिने जाते है। रिश्तों के नाम में भी विभिन्नता है जैसे पिता के भाई–बहन का संबंध एवं माता के भाई–बहन का संबंध अलग–अलग होता है। मोटे तौर पर कह सकते हैं कि जो रक्त संबंधी हैं तथा रक्त संबंधी नहीं हैं, एवं जो विवाह संबंधी हैं एवं विवाह संबंधी नहीं भी हैं ये सभी हमारे नातेदारी के अन्तर्गत आते है। सभी के संबोधन शब्द भी भिन्न–भिन्न होते हैं। ये संबोधन शब्द धर्म, संस्कृति, परिस्थिति एवं भौगोलिकता के आधार पर सभी समाजो में भिन्न–भिन्न हो सकते हैं।

नातेदारी की रीतियाँ

नातेदारी के अन्तर्गत जब हमारा संबंध किसी व्यक्ति से बन जाता है तब उस संबंध में एक विशिष्ट प्रकार का व्यवहार भी पनपता है जो उस रिश्ते से ही संबंधित होता है। विभिन्न प्रकार के संबंधियों के प्रति हमारे व्यवहार भिन्न–भिन्न प्रकार के होते हैं। किसी के साथ हमारा संबंध श्रद्धा पर आधारित होता है, तो किसी के साथ आदर, प्रेम, मधुरता, मजाक या हँसी पर आधारित होता है। संतानों का माता–पिता के साथ श्रद्धा एवं सम्मान का संबंध होता है, तो पति–पत्नि के बीच प्रेम का, वहीं पर जीजा साली के मध्य मधुरता का संबंध होता है। हमारे समाज में दो संबंधियों के बीच किस प्रकार के व्यवहार होंगे इसके नियम बने होते हैं जिन्हें हम नातेदारी के नियामक व्यवहार या नातेदारी की रीतियाँ कहते हैं, जो निम्न हैः

1. **परिहार या विमुखताः** परिहार का अर्थ है सामाजिक दूरी, अर्थात् कुछ संबंधी आपस में एक दूसरे से कुछ दूरी बनाये रखते है या एक दूसरे से दूरी बनाये रखने का प्रयत्न करते हैं। इस रीति के अनुसार संबंधियो का नाम लेना वर्जित होता है। कभी–कभी तो वे संबंधी एक दूसरे को देख भी नहीं सकते, बातचीत भी नहीं कर सकते, आमने–सामने नहीं आ सकते। परिहार या विमुखता के संबंध विभिन्न संबंधों में देखने को मिलते है। कई समाजों में भाई–बहन परस्पर परिहार का पालन करते हैं। परिहार के संबंध में निम्न परिहार समाज में देखे जाते हैंः

1. ज्येष्ठ एवं छोटे भाई की पत्नि के बीच परिहार।
2. स्त्री के पति का पत्नि की बड़ी बहन से परिहार।
3. ससुर पुत्रवधु परिहार।
4. सास दमाद परिहार।
5. सास बहु परिहार।
6. ससुर दमाद परिहार।

इसके अलावा भी विभिन्न समाजों में विभिन्न प्रकार के विवाह एवं परिवार के स्वरूप होते हैं वहां परिहार या विमुखता के प्रकार एवं स्वरूप भी भिन्न–भिन्न प्रकार के एवं भिन्न–भिन्न संबंधियों से देखने को मिलते है।

2. **परिहास या हँसी मजाक के संबंधः** परिहास संबंध परिहार से ठीक विपरीत है। परिहास में संबंधों में घनिष्ठता पाई जाती है। परिहास का शाब्दिक अर्थ भी हँसी – मजाक, स्वच्छन्दता तथा बराबरी के संबंध का परिचायक है। परिहास के अर्न्तगत दो रिश्तेदारों में परस्पर हँसी मजाक या मजाक में ही परेशान करना शामिल रहता है। परिहास में दोनों पक्ष सकारात्मक रूप से मजाक करते हैं। गलत या बुरा मानने वाले कम ही होते है। इस प्रकार के व्यवहार प्रायः विवाह संबंधियों के बीच पाये जाते है। ये संबंध मित्रता का प्रतीक माना जाता है। प्रायः परिहास निम्न संबंधों में पाये जाते हैः

1. जीजा – साली परिहास
2. देवर – भाभी परिहास
3. ननंद – भाभी परिहास
4. मामा – भाँजा परिहास
5. दादी – पोता परिहास
6. दादा – पोती परिहास
7. चाचा – भतीजा परिहास

विभिन्न जनजातियों में और भी विभिन्न प्रकार के परिहास देखने को मिलते हैं। इस प्रकार संबंधों में हँसी–मजाक होली या अन्य उत्सव एवं विवाह आदि अवसरों में अधिक होता है। सभी समाजों में परिहास किसी न किसी रूप में प्रचलन में है।

3. **माध्यमिक संबोधनः** नातेदारी की इस प्रकार की रीति में संबंध को पुकारने के लिए किसी अन्य व्यक्ति को माध्यम बनाया जाता है इसलिए इस रीति को माध्यमिक संबोधन कहा जाता है। यह प्रथा हिन्दु एवं खासी जनजातियों में पाई जाती है। इस प्रथा के अनुसार मामा अपने भाँजा–भाँजी के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखते है। कुछ समाजो में भाँजा का नाम किसी माध्यम या संबोधन द्वारा लिया जाता है। कुछ समाज शास्त्री माध्यमिक संबोधन रीति को मातृसत्तामक परिवार से मानते है। माध्यमिक संबोधन में किसी नाम के अलावा किसी प्रतीक का भी प्रयोग किया जाता है, उदाहरण स्वरूप एक पत्नि अपने पति को संबोधित करने के लिए अपने पुत्र या पुत्री के 'पिता' के रूप में संबोधित करती है या अपने देवर या ननंद के 'भैय्या' का संबोधन देती है।

4. **मातुलेयः** जनजातीय समाजो में मातुलेय नातेदारी एक विशेष रीति है जिसका संबंध मुख्य रूप से मातृ–सत्तात्मक परिवार व्यवस्था से है। इस रीति में बच्चों का अपने पिता से अधिक अपने मामा से संबंध होता है। इस रीति में मामा अपने भाँजे को अपनी सम्पति का उत्तराधिकारी बनाता है। इस रीति में बालक अपने पिता की अपेक्षा अपने मामा को आदर एवं महत्व अधिक देता है। ऐसा ही प्रशिक्षण उसे बचपन से ही दिया जाता है। होपी जनजाती में बालक जब विवाह के योग्य होता है तब वह अपने पिता का घर छोड़कर अपने मामा के घर आ जाता है और अपने मामा के परिवार का सदस्य बन जाता है।

5. **पित–भगिनीय अधिकारः** जिस प्रकार से मातुलेय रीति में मामा को महत्व दिया जाता है उसी प्रकार पितृ–भगिनीय अधिकार में पिता की बहन को विशेष आदर एवं महत्व दिया जाता है। यह रीति पितृसत्तात्मक परिवार में देखी जाती है। पिता की बहन अर्थात् बुआ अपने भतीजे एवं भतीजियों के साथ विशिष्ट संबंध रखती है। हिन्दू समाज में विभिन्न संस्कार भी बुआ के द्वारा ही किए जाते हैं। नामकरण एवं विवाह में विभिन्न प्रकार के नेग बुआ के हाथो सम्पन्न कराए जाते हैं। इस रीति को पितृ–श्वश्रेय रीति भी कहते है। कुछ समाज शास्त्रियों का मानना है कि जिन संबंध में विवाह के बाद अंतः क्रिया शीथिल होने की संभावना रहती है उन्हें सतत् बनाये रखने के लिए इस रीति या प्रथा का प्रचलन शुरू हुआ होगा। अतः अपने जन्म स्थान से सम्पर्क बनाये रखने के लिए स्वयं पिता की बहन को विवाह के बाद भी आदर सम्मान देने के लिए इस प्रकार की रीति का चलन शुरू हुआ है।

6. **सह–प्रसविता या सहकष्टी:** समाज में इस रीति का संबंध पत्नि के प्रसव काल से है। इसके अन्तर्गत जब पत्नि गर्भवती होती है तो पति को भी सभी निषेधों का पालन करना पड़ता है जिनका पालन उसकी गर्भवती पत्नि को करना पड़ता है। भारत के टोडा जनजातियों में इस रीति का प्रचलन है। इस रीति के अनुसार पति या पिता अपनी पत्नि या भावी संतान के प्रति प्रेम प्रदर्शित करता है। कुछ समाज शास्त्रियों ने इस रीति को वैवाहिक संबंधों को अधिक दृढ़ बनाने और पैतृक प्रेम प्राप्त करने की एक सामाजिक क्रिया के रूप में माना है।

उपरोक्त नातेदारी की प्रचलित रीतियों से स्पष्ट होता है कि समाज में ये रीतियां वर्तमान में भी देखी जाती है। ये रीतियां संबंधों को मजबूत बनाने के साथ–साथ संबंधों को पीढ़ियों तक बनाए रखने का कार्य भी करती है तभी तो हम नातेदारों को अपने जीवन में अधिक महत्व देते है। यह हमारी संस्कृति एवं परम्परा में भी शामिल है।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम पाते है कि नातेदारी सभी समाजों की एक स्थायी संरचना है। समाज में जिनके अधिक नातेदार होते है उन्हें अधिक सम्मान प्राप्त होता है। यह माना गया है कि जिनके प्राथमिक नातेदार अधिक होंगे उनके द्वितीयक नातेदार भी अधिक होंगे। जिनका दोनों नातेदारों से संबंध घनिष्ठ होगा उनका तृतीयक नातेदारों से भी अच्छा संबंध होगा। नातेदार चाहें रक्त संबंधी हो या विचार संबंधी सभी का व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान होता है। आदिम समाज एवं आधुनिक समाजों का प्रमुख आधार नातेदारी व्यवस्था ही रहा है। नातेदारी का संबंध विवाह एवं परिवार से भले ही है किन्तु नातेदारी का संबंध निभाने से अधिक सुदृढ़ होता है। समाज में अपने अस्तित्व नातेदारी व्यवस्था के बगैर बनाये रखना असंभव है।

संदर्भ सूची

1. Davis, Kingsley (1949) *Human Society,* MacMillan Company, New York, p. 392-429.
2. दुबे, एस. सी., (1960) *मानव और संस्कृति,* राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 123.
3. Fox, Robin, (1968) *Kinship and Marriage: An Anthropological Perspective,* Penguin Books, London, p. 25.
4. कर्बे, इरावती, (1968) हिंदु समाजः एन इंटरप्रेटेशन, पुने, डेक्कन कॉलिज, पृष्ठ संख्या 36–40.

––==00==––